|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

|| गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ||

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 10: विभूतियोग

2/3 (श्लोक 11-25), शनिवार, 14 दिसंबर 2024

विवेचक: गीता विदूषी सौ वंदना जी वर्णेकर

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/U8L_epUgqpY

दिव्य विभूतियों का प्रधानता से वर्णन

गीता परिवार के गीत, सदा रक्षक हनुमान चालीसा पाठ, माँ सरस्वती वन्दना और परम्परागत दीप प्रज्वलन, माँ सरस्वती, भगवान् श्रीकृष्ण, सन्त श्रीज्ञानेश्वर महाराज और परमपूज्य गुरुदेव श्रीगोविन्ददेव गिरि जी महाराज के चरणकमलों मे वन्दन करते हुए आज के अध्याय दस के मध्यांश विवेचन का प्रारम्भ हुआ।

श्रीमद्भगवद्गीता श्रीभगवान् का अनुपमेय गीत है जिसे श्रीभगवान् ने समराङ्गण में मोहग्रस्त अर्जुन को कर्त्तव्य के पथ पर अग्रसर करने के लिए, उनका अवबोध दूर करने के लिए, उन्हें प्रेरणा प्रदान करने के लिए प्रत्यक्ष अपने मुखारविन्द से गाया। इन सात सौ श्लोकों के अनुपमेय गीत में मानो श्रीभगवान् ने गागर मे सागर ही भर दिया और आकार में लघु यह ग्रन्थ आशय में, गहराई मे महत्तम हो गया।

आज भी कितने ही महानुभाव गीताजी में गोते लगाते हैं। इसमें छुपे भावार्थ को ढूँढ़ने का प्रयास करते हैं। सद्गुरुदेव के कृपा प्रसाद से हम भी चिन्तन द्वारा उसके ज्ञान के कुछ कण बटोरने का प्रयास कर रहे हैं। हमने देखा किस प्रकार से अर्जुन को सर्वोपरि ज्ञान नवम् अध्याय में श्रीभगवान् ने प्रदान किया, जो कि ज्ञान, भक्ति और कर्म तीनों योगों का एक सङ्गम है और कहते-कहते श्रीभगवान् ने कह दिया कि -

समोऽहं(म्) सर्वभूतेषु, न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः।
ये भजन्ति तु मां(म्) भक्त्या, मयि ते तेषु चाप्यहम्॥9.29॥

श्रीभगवान् कहते हैं कि मेरे लिए सभी समान हैं और मैं किसी से द्वेष नहीं करता या कोई मुझे अधिक या कम प्रिय नहीं होता। श्रीभगवान् के लिए सभी समान हैं। श्रीभगवान् समत्त्व मे स्थित हैं और ये समत्त्व हमारे अन्त:करण मे तब स्थित होगा जब हम उन्हें समग्रता से, सम्पूर्णत: जानेंगे। उस सृष्टिकर्ता को जानना, उस सृष्टिकर्ता और मेरा क्या सम्बन्ध है? यह जानना, जीव, जगत् और जगदीश्वर इन तीनों का परस्पर सम्बन्ध समझना, यही मनुष्य के जीवन का अन्तिम गन्तव्य है। श्रीभगवान् अर्जुन को यह कहते हुए अपना रहस्य खोलते हैं।

बुद्धिर्ज्ञानमसम्मोहः, क्षमा सत्यं(न्) दमः(श्) शमः।
सुखं(न्) दुःखं(म्) भवोऽभावो, भयं(ञ्) चाभयमेव च॥10.4॥

कि किस प्रकार से यह जड़ और चेतन का सङ्गम है। जैसे हम कह सकते हैं कि हार्डवेयर और सॉफ़्टवेयर दोनों परमात्मा से उत्पन्न हुए हैं और इसलिए इन दोनों को जानना किस प्रकार से आवश्यक है।

नागपुर मे गीता जयन्ती पर एक चर्चा हुई आज के परिप्रेक्ष्य में कि किस प्रकार आर्टिफिशियल इण्टेलिजेन्स से आज हम लोग सम्पूर्ण सृष्टि के साथ जुड़ गए है। हमारे इण्टरनेट के माध्यम से और यह सारा जो विज्ञान का चमत्कार हम देखते हैं उसमें भगवद्गीता का क्या महत्त्व है या भगवद्गीता हमें कौन सा दृष्टिकोण प्रदान करती है? ऐसी यह सुन्दर चर्चा थी और हम लोग देख रहे हैं यहाँ पर कि किस प्रकार से सॉफ्टवेयर में कोई रोबोट निर्माण करता है और आर्टिफिशियल इण्टेलिजेन्स के माध्यम से मानों अनेक चमत्कार हो रहे हैं। एक बात है कि कोई रोबोट होगा, कोई यन्त्र मानव होगा उसमें ये भावनाएँ नहीं होती, उसमें इस प्रकार की बुद्धि नहीं होती। बुद्धि तो मनुष्य उसमें जो सॉफ्टवेयर देता है उसी की होती है। यह भावनाओं का जो खेल जीवन मे चलता है। यही भावनाओं का खेल मनुष्य के मन में है।

आश्चर्य की बात तो यह है कि पाँच हजार साल पूर्व श्रीभगवान् के मुखारविन्द से प्रवाहित यह गीताजी की ज्ञान की धारा आज भी किस प्रकार से हमारे मन को मनोबल प्रदान करती है। हमारी भावनाओं पर नियन्त्रण कैसे करना? हमारे विकारों पर नियन्त्रण कैसे करना और कैसे जीवन को आनन्दमय बनाना? यह हमें सिखाती है, हमे यह समझना है। भगवद्गीता का अनन्य असाधारण महत्त्व है क्योंकि परिस्थिति बदल गई, विज्ञान की प्रगति हो गई लेकिन मनुष्य का मन वैसा ही है। मन उसी प्रकार से विकारों से आन्दोलित होता है और जितना यह जड़ के साथ जुड़ेगा उतना यह मन जड़ होता जाएगा इसलिए श्रीभगवान् उसे चैतन्य के साथ जोड़ना चाहते हैं। चैतन्य सभी के अन्तःकरण में है। एक ही चेतना से किस प्रकार से सृष्टि का खेल चल रहा है! हर कण-कण मे परमात्मा विराजित है। श्रीभगवान् के लिए ध्यान मे, मैं किसको लाता हूँ? जो चित्र मुझ सबसे भला लगाता है उसको।

मच्चित्ता मद्गतप्राणा,बोधयन्तः(फ्) परस्परम्।
कथयन्तश्च मां(न्) नित्यं(न्), तुष्यन्ति च रमन्ति च॥10.9॥

परमात्मा से यह चित्त (subconscious mind) से अन्तरङ्ग की एक तार किसी भी माध्यम से जोड़ना और सदा जुड़ी हुई रखना, उस परमात्मा के नित्य सन्निकट रहना। अपने मन के द्वारा जिसने यह साध्य कर लिया उन्हें श्रीभगवान् कहते हैं, उसे मैं क्या देता हूँ? श्रीभगवान् कहते हैं,

तेषां(म्) सततयुक्तानां(म्), भजतां(म्) प्रीतिपूर्वकम्।
ददामि बुद्धियोगं(न्) तं(यँ), येन मामुपयान्ति ते॥10.10॥

जिसने अपना मन श्रीभगवान् के साथ जोड़ दिया, मन के तार जोड़ दिए, मन से उस परमात्मा के साथ एक प्रेम का अनन्य सम्बन्ध निर्माण कर दिया। जिन्होंने श्रीभगवान् सर्वोपरि हैं, यह मानते हुए जीवन यापन करना आरम्भ कर दिया तो श्रीभगवान् उनके लिए कहते हैं, मैं उसे बुद्धियोग कहता हूँ। बुद्धि से परमात्मा को जानने की क्षमता प्रदान कर देता हूँ।

तर्क या बुद्धि से उस परमात्मा के सन्निकट पहुँचना एक बात है और मन के द्वारा पहुँचना दूसरी बात है। हमारा मन, भावनाएँ, emmotions, निर्माण करता है और बुद्धि तर्क, logic चाहती है। भावना से परमात्मा के साथ जुड़ने की, परमात्मा को समझने की क्षमता प्राप्त होती है। उसके कारण ऐसे लोग मुझे प्राप्त कर लेते हैं और मुझे समग्रता से जान लेते हैं।

उनके मन में कोई आशङ्का नही रहती। उनके मन में एक अनुकम्पा, एक कम्पन निर्माण होता है। इस पर श्रीभगवान् क्या कहते हैं?

10.11

तेषामेवानुकम्पार्थम्,अहमज्ञानजं(न्) तमः।

नाशयाम्यात्मभावस्थो, ज्ञानदीपेन भास्वता॥10.11॥

उन भक्तों पर कृपा करने के लिये ही उनके स्वरूप (होने पन) में रहने वाला मैं (उनके) अज्ञानजन्य अन्धकार को देदीप्यमान ज्ञानरूप दीपक के द्वारा नष्ट कर देता हूँ।

विवेचनः श्रीभगवान् कहते हैं, **तेषामेवानुकम्पार्थम्**, अनुकम्प, (Resonance) यह विज्ञान का एक सिद्धान्त है।

अनुकम्प (Vibrations) की एक बड़ी विशेषतालहोती है। जैसे एक के मन के वाइब्रेशन दूसरे के मन मे प्रवेश करते हैं, जैसे किसी कक्ष मे अलग-अलग वाद्य रखे हो और हम जानते हैं कि इन वाद्यों के तारों को छूने से सङ्गीत निर्माण होता है और जैसे ही एक तार में झङ्कार निर्माण होती है, वाइब्रेशंस निर्माण होते हैं तो अपने आप उस कक्ष में रखे हुए दूसरे वाद्यों के तारों में भी वह कम्पन निर्माण होता है, रेजोनेंस निर्माण होता है, वाइब्रेशन निर्माण होते हैं और यह रेजोनेंस विज्ञान का एक सिद्धान्त है। श्रीभगवान् कहते हैं जीव पर अनुकम्पा करने के लिए एक कम्प उनके स्वयं के मन मे निर्मित होना चाहिए, उसके पश्चात् ही वह कम्प मुझ तक पहुँचता है। अर्जुन पहले मन मे यह कम्प निर्मित होना चाहिए फिर अनुकम्पा होगी। पहले कम्प फिर अनुकम्पा। श्रीभगवान् कहते हैं कि जिनके मन मे मेरे लिए यह कम्प निर्मित होता है, यह तरङ्गे निर्मित होती हैं, मेरे लिए उनके मन मे कम्पन निर्माण होता है।

उन पर अनुकम्पा करने के लिए, अनुग्रह करने के लिए मैं क्या करता हूँ? श्रीभगवान् कहते हैं, मैं उनके अन्तःकरण में, आत्मभाव के रूप में स्थित रहता हूँ।

परं भावमजानन्तो मम भूतमहेश्वरम्, नवम अध्याय में श्रीभगवान् ने कह दिया कि मैं तो भाव के रूप में मनुष्य के अन्तःकरण मे स्थित रहता हूँ।

भावबळे आकळे, ये-हवी नाकळे। करतळी आवळे तैसा हरी।।
ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं, वह भाव से जाना जाता है।

केवल बुद्धि से ही नहीं अपितु भाव से भी श्रीभगवान् को जाना जा सकता है। पहले मन मे भाव निर्माण होना चहिए। श्रीभगवान् कहते हैं कि मन में विषयों के कारण, द्वन्द्वों के कारण, (conflict) के कारण अज्ञान रूपी जो तम, जो अन्धकार है वहाँ प्रकाश स्वरूप ज्ञान के दीपक को प्रज्वलित कर मैं उनके मन के अन्धकार रूपी अज्ञान को नष्ट करता हूँ। ज्ञान का दीपक हाथ में लेकर उनके जीवन पथ को प्रकाशित करने के लिए, मैं स्वयं उनके साथ चलता हूँ।

ज्ञान का दीपक जलाने के लिए जो पात्रता आवश्यक है, वह भी मैं उसे प्रदान करता हूँ। आत्मज्ञान के ग्रहण की पात्रता भी चाहिए। यह ज्ञान का आलोक किस प्रकार से श्रीभगवान् जगाते हैं, यह हम हमारे सन्त महात्माओं के जीवन मे, हम देखते हैं।

ठाकुर रामकृष्ण देव जी के जीवन का एक प्रसङ्ग है। गदाधर माँ जगदम्बा के अनन्य असाधारण भक्त थे। उनके भाई ने दक्षिणेश्वर में रानी रासमणि के मन्दिर में पुजारी के रूप में उन्हे नियुक्त किया क्योंकि उन्होंने कह दिया था कि मैं पाठशाला में जाकर रोटी प्राप्त करने की विद्या नहीं सीखना चाहता। मैं तो जीवन की विद्या सीखना चाहता हूँ कि जीवन क्या है? जीवन का अर्थ क्या है? मैं किस लिए इस भूमि पर आया हूँ? यह मैं जानना चाहता हूँ। उन्होंने जगदम्बा माता की ऐसे अनन्य भाव से असाधारण सेवा की, कि जगदम्बा माता स्वयं अपना विग्रह छोड़ कर उनसे बातें करने लगी। उनका भक्तिमय अन्तःकरण तो था पर जगदम्बा माता को लगा कि उनके मन मे ज्ञान का भी प्रकाश फैले तो एक दिन जब ठाकुरजी भक्ति के ध्यान मे बैठे थे तो वहाँ एक व्यक्ति नाव से गङ्गा जी पार कर के आए। वे थे तोतापुरी महाराज। उन्होंने ठाकुरजी की साधना की स्थिति देखी तो बोले तुम साधना की उच्च अवस्था पर पहुँचे हुए हो, ऐसे साधक हो तो मैं तुम्हें वेदान्त पढ़ाना चाहता हूँ। मैं तुम्हारे अन्दर ज्ञान का दीपक जलाना चाहता हूँ। ठाकुर जी बोले मैं तो माँ को पूछे बिना कुछ नहीं करता, मैं उनसे पूछ कर आता हूँ। जब उन्होंने पूछा तो माता ने बोला कि, मैंने ही तो उन्हें हिमालय की कन्दरा से तुम्हें ज्ञान देने के लिए यहाँ बुलाया है। तुम निःसङ्कोच उनसे वेदान्त सीखो। जब किसी भक्त को ज्ञान प्रदान करना होता है तो श्रीभगवान् स्वयं उसके गुरु की व्यवस्था कर देते हैं।

अर्जुन अचम्भित हैं! कि मेरे प्रिय सखा इतने विशेष होंगे यह तो मैंने सोचा ही नहीं था।

10.12, 10.13

अर्जुन उवाच
परं(म्) ब्रह्म परं(न्) धाम, पवित्रं(म्) परमं(म्) भवान्।
पुरुषं(म्) शाश्वतं(न्) दिव्यम्, आदिदेवमजं(म्) विभुम्॥10.12॥
आहुस्त्वामृषयः(स्) सर्वे, देवर्षिर्नारदस्तथा।
असितो देवलो व्यासः(स्), स्वयं(ञ्) चैव ब्रवीषि मे॥10.13॥

अर्जुन बोले - परम ब्रह्म, परम धाम (और) महान् पवित्र आप ही हैं। (आप) शाश्वत, दिव्य पुरुष, आदिदेव, अजन्मा (और) सर्वव्यापक हैं -
(ऐसा) आपको सबके सब ऋषि, देवर्षि नारद, असित, देवल तथा व्यास कहते हैं और स्वयं आप भी मेरे प्रति कहते हैं।

विवेचनः अर्जुन श्रीभगवान् को अनेक रूप मे जानते हैं। वो ग्वाले भी हैं, वीर धनुर्धारी भी, अर्जुन के ममेरे भाई भी, मामा के पुत्र हैं जिनका जन्म कारागृह में हुआ है, परन्तु अर्जुन उनकी विशेषता को सम्पूर्णत: नही जानते। अर्जुन परमात्मा को पूर्णतः नहीं जानते। जो हमारी अवस्था है वही अर्जुन की अवस्था है। हम भी श्रीभगवान् को आंशिक रूप में जानते हैं। अर्जुन श्रीभगवान् से कह रहे हैं कि आप परमधाम, परम पवित्र, परब्रह्म हो। मैंने यह सुना है आपके लिए, अनेकों के वचन से। हमारे घर में, हमारे महल मे जो ऋषि पधारते थे वह आपकी स्तुति गाते थे, आपकी गाथा गाते थे। आप दिव्य पुरुष हैं, आप उस पर ब्रह्म परमात्मा के अवतार हो। आप देवों के भी देव हो, आदि देवों में अजम् यानी आपका जन्म नहीं होता, आप अजय हो और विभव यानी सर्वव्यापी हो। देवर्षि नारद, असित और देवल ऋषि भी इस प्रकार से आपकी स्तुति का गान करते थे।

भगवान् वेदव्यास जी भी जब कभी हमारे राजमहल मे आते थे तो आपके बारे मे इसी प्रकार के वचन उनके मुख से हम लोग सुनते थे लेकिन तब मैंने इसकी और उतना ध्यान ही नहीं दिया। श्रीभगवान् की भक्ति गाने वाले अनेक महानुभाव किस प्रकार से उनके गीत गाते हैं, कितने स्तोत्रों की रचना करते हैं, हमें पता है।

सन्त, महात्माओं के गाए गुणगानों का हम आनन्द तो लेते हैं परन्तु उसका सही-सही अर्थ जानने का हम प्रयास ही नहीं करते। इसका वर्णन करते हुए अर्जुन ने अपनी भावनाएँ व्यक्त की हैं कि इतने सारे लोग आपकी स्तुति जब गाते थे तो मेरा पूरा ध्यान उस गान की ओर होता था, किस प्रकार वह गान मुझे मन्त्रमुग्ध कर देता था परन्तु मैंने उसके अर्थ को जानने का प्रयास ही नहीं किया, कभी गान को समझने का प्रयास ही नहीं किया। क्यों नहीं किया? क्योंकि श्रीभगवान् ने अर्जुन के ध्यान में यह आने ही नहीं दिया।

ऐसा कहा जाता है, **ते जानही जिनु देवू जनाय,** वही जानते हैं।

श्रीभगवान् यह जिसे बताना चाहते हैं या जिनमें यह ज्ञान जाग्रत करना चाहते हैं, वही उन्हें जान सकते हैं, इसलिये अगर उनको जानना है तो श्रीभगवान् से ही अनुनय करना पड़ेगा कि आपने जिस प्रकार अर्जुन को यह बोध दिया या जिस प्रकार आप अपने भक्तों के अन्तःकरण मे ज्ञान का दीपक जलाते हो, हमारे अन्तःकरण में भी वैसा ही ज्ञान दीप जला दीजिए। हमें भी वहाँ तक पहुँचा दीजिए। यहाँ पर एक बहुत सुन्दर बात देखिए कि श्रीभगवान् अर्जुन के माध्यम से हम सबको अपने स्वयं का परिचय देना चाहते हैं लेकिन उन्हें वे ही पुण्यवान समझ सकते हैं जिन्हें वे स्वयं समझाना चाहते हैं। हमें यह ज्ञात हो।

10.14

सर्वमेतदृतं(म्) मन्ये, यन्मां(म्) वदसि केशव।

न हि ते भगवन्व्यक्तिं(म्), विदुर्देवा न दानवाः॥10.14॥

हे केशव ! मुझसे (आप) जो कुछ कह रहे हैं, यह सब (मैं) सत्य मानता हूँ। हे भगवन् ! आपके प्रकट होने को न तो देवता जानते हैं (और) न दानव ही जानते हैं।

विवेचन- Unless He chooses, we can't understand Him.
अर्जुन कहते हैं- यह जो आप बता रहे हैं, वह मैं सत्य मान रहा हूँ। मुझे मालूम है आप सत्य बोल रहे हैं। आप कण-कण में विराजमान हैं। आप अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड नायक हैं। आपका कोई पार नहीं है। आप अजम् हैं। आपका कोई आदि, मध्य और अन्त नहीं। आप अद्भुत हो यह मैं मानता हूँ, परन्तु हे भगवान्! आपके सम्पूर्ण रूप को न तो दानव और न ही देवता जानते हैं, न सुर जानते है, न असुर जानते हैं। श्रीभगवान् जिन्हें अपना रूप दिखाना चाहते हैं, वे उन्हें ही दिखते हैं।

यशोदा मैया का प्रसङ्ग हमें याद है। जब छोटे से कान्हा ने मिट्टी खाई तो यशोदा मैया ने उन्हें मुँह खोलने को कहा तो उन्होंने यशोदा मैया को अपने मुँह के अन्दर पूरे चौदह ब्रह्माण्ड दिखा दिए। मैया तो अचम्भित हो गई, तब श्रीभगवान् ने तुरन्त अपना मुँह बन्द कर लिया। वे नहीं चाहते थे कि यशोदा माँ उन्हें समग्रता से जान जाए नहीं तो वह उनकी पूजा ही करने लग जाएगी।

अर्जुन अभी श्रीभगवान् को थोड़ा-थोड़ा समझ रहे हैं। अर्जुन कहते हैं कि कुछ-कुछ नहीं, अब मुझे समग्रता से बताइएगा कि आप कैसे इस चराचर मे सर्वत्र विराजित हैं?

10.15

स्वयमेवात्मनात्मानं(म्), वेत्थ त्वं(म्) पुरुषोत्तम।
भूतभावन भूतेश,देवदेव जगत्पते॥10.15॥

हे भूतभावन ! हे भूतेश ! हे देवदेव ! हे जगत्पते ! हे पुरुषोत्तम ! आप स्वयं ही अपने-आपसे अपने-आपको जानते हैं।

विवेचनः अत्यन्त रोमाञ्चित और आनन्दित अर्जुन कहते हैं- हे विश्व का निर्माण करने वाले, हे विश्व का सञ्चालन करने वाले ठाकुर, सम्पूर्ण विश्व के नियन्ता, आप स्वयं ही स्वयं को जानते हो। क्या आप अपना सत्य परिचय मुझे करवा सकते है?

हे भूतों को उत्पन्न करने वाले, भूतों के ईश, देवताओं के देव, हे जगद्पति आप स्वयं ही स्वयं को जानते हो, तो आप अपना परिचय मुझसे क्यों छुपा रहे हो? समग्रता से आप मुझे आपका परिचय करा दीजिए, अर्जुन अनुनय करते हैं कि अब मैं पूर्णतया आपको जानना चाहता हूँ।

जिसका निर्माण होता है, जन्म होता है वह भूत। विभूति का अर्थ है, जो उनमें विशेष है, जिसमे परमात्मा का प्रागट्य या परमात्मा की अनुभूति होती है।

मन्दिर मे हम जाते हैं तो हमें परमात्मा की कुछ अनुभूति होती है, हमारा मन शान्त हो जाता है। गङ्गा मैया के सानिध्य मे जब बैठते हैं तो मन शान्त हो जाता है। वहाँ हमे परमात्मा की अनुभूति होती है। हम हिमालय पर जाते हैं या पेड़-पौधों के बीच होते हैं तो हमे शान्ति का अनुभव, आनन्द का अनुभव होता है। इन सबके सानिध्य में हमारा मन उस निर्वाण तक पहुँचता है और शान्ति पाता है। परमात्मा की शान्ति हमारे मन मे सङ्क्रमित होती है।

विभूति अर्थात् वे स्थान, वस्तुएँ या पदार्थ, जहाँ पर परमात्मा का दिव्य प्रकाश हमें प्रकर्षता से अनुभव होता है।

विभूति का दूसरा अर्थ समृद्धि होता है, परमात्मा की विशेषता की समृद्धि।

10.16

वक्तुमर्हस्यशेषेण,दिव्या ह्यात्मविभूतयः।
याभिर्विभूतिभिर्लोकान्, इमांस्त्वं(म्) व्याप्य तिष्ठसि॥10.16॥

इसलिए जिन विभूतियों से आप इन सम्पूर्ण लोकों को व्याप्त करके स्थित हैं, (उन सभी) अपनी दिव्य विभूतियों का सम्पूर्णता से वर्णन करने में (आप ही) समर्थ हैं।

विवेचनः इन सभी भूत मात्रों को व्याप्त करते हुए, इन तीनों लोकों को व्याप्त करते हुए, आपकी दिव्य विभूतियों का वर्णन केवल आप ही कर सकते हो, क्योंकि आप को ही आपकी विभूतियाँ मालूम है। कुछ भी शेष न रहे, सम्पूर्णत: इन विभूतियों का ऐसा वर्णन, हे भगवान्! केवल आप ही कर सकते हैं। ऐसे कुछ स्थान जहाँ पर परम् परमात्मा का निरन्तर स्मरण मुझे हो, वे मुझे बताइए क्योंकि दिन भर मनुष्य अपने घर के मन्दिर में, ठाकुरबाड़ी में, पूजा करते हुए तो नहीं बैठ सकता। व्यवहार-कर्म करना है, तो व्यवहार करते समय भी मेरा मन आपके चिन्तन में कैसे रमें? कैसे मैं आपका चिन्तन कर सकता हूँ।

10.17

कथं(म्) विद्यामहं(म्) योगिंस्, त्वां(म्) सदा परिचिन्तयन्।
केषु केषु च भावेषु,चिन्त्योऽसि भगवन्मया॥10.17॥

हे योगिन् ! हरदम सांगोपांग चिन्तन करता हुआ मैं आपको कैसे जानूँ ? और हे भगवन् ! किन-किन भावों में (आप) मेरे द्वारा चिन्तन किये जा सकते हैं अर्थात् किन-किन भावों में मैं आपका चिन्तन करूँ?

विवेचनः हे योगेश्वर कृष्ण! योगेश्वर अर्थात् किसी को भी किसी के साथ जोड़ने वाले, सभी को एक दूसरे से जोड़ने वाले, अन्तरङ्ग से सभी को जोड़ने वाले, मैं किस प्रकार से आपका परिचिन्तन करूँ? मैं आपको कैसे जान सकता हूँ? आप कौन-कौन से भावों में चिन्तनीय हैं? श्रीभगवान् ने कह दिया कि मैं सर्वव्यापी हूँ, पर प्रत्येक स्थान अथवा वस्तु भी हर जगह उनका प्रकाश परावर्तित नहीं करती। क्या हम किसी अपराधी में या किसी बलात्कारी के अन्दर वही परमात्मा स्थित है, यह अनुभव कर सकते हैं? कभी-कभी तो हमारे विकार इतने बढ़ जाते हैं कि वह अविकारी परमात्मा हमारे विकारों मे बँध जाता है।

जनता में विकार है और सृष्टि का कार्य विकारों के साथ ही होता है। जिस प्रकार शुद्ध सोना जिसे चौबीस कैरेट सोना कहते हैं, उससे आभूषण नहीं बनाए जा सकते। उसमें अशुद्धियाँ यानी दूसरी धातुएँ मिलाई जाती हैं तभी उसके आभूषण आदि बनाए जा सकते हैं, जिन्हें हम तेईस कैरेट, बाईस कैरेट, अट्ठारह कैरेट सोना कहते हैं। इस प्रकार यह अविकारी परमात्मा जब कर्मानुसार विकार डालते हैं तभी भूतों की उत्पत्ति होती है और तभी उनका कार्य चलता है। तब अविकारी परमात्मा इन विकारों के नीचे दब जाते हैं।

तुलसीदास जी कहते हैं,

इति वदति तुलसीदास शंकर-शेष-मुनि-मन-रंजनं।
मम हृदय- कंज निवास कुरु, कामादि खल-दल-गंजनं।।

आप अविकारी परमात्मा हैं श्रीराम और मेरा मन विकारों से भरा है। विकारों का आदान-प्रदान मेरे अन्त:करण मे चलता है। यदि आप मेरे हृदय मे बस जाएँ तो मेरे अन्तःकरण के सारे विकार बह जायेंगे, इसलिए अन्तःकरण की शुद्धता के लिए उस अविकारी परमात्मा की भक्ति हमारे सभी सन्त महात्मा करते हैं। जैसे-जैसे भक्ति दृढ़ होती है वैसे-वैसे यह विकार शिथिल होते जाते हैं। फिर उस परमात्मा का प्रतिबिम्ब, उसकी अनुभूति उन्हें अपने अन्त:करण मे होती है।

सन्त ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं कि सम्पूर्ण जगत् मे उस परमात्मा की अनुभूति लेने की क्षमता हममें उत्पन्न हो जाती है।

जे जे भेटे भूत। तें मानिजे भगवंत।

हा भक्तियोगु निश्चित। जाण माझा।

अपने सामने आने वाले हर व्यक्ति में वह उस परमात्मा को देख सकते हैं।
अर्जुन पूछते हैं, आप सर्वव्यापी हैं पर मैं इन विकारों से ग्रसित दुर्योधन और कौरवों में आपका चिन्तन कैसे करूँ? मुझे तो आज भी द्रौपदी के चीर-हरण का वह दृश्य दिखाई देता है।

ग्यारहवें अध्याय में श्रीभगवान् का विश्वरूप दर्शन हम देखेंगे। हम देखेंगे कि किस प्रकार से श्रीभगवान् कण-कण मे समाए हुए हैं।

आचार्य विनोबा भावे जी कहते हैं, बालक को पहले संयुक्त अक्षर नहीं पढ़ाया जाता। उसे पहले सरल अक्षर पढ़ाये जाते हैं।

उसी प्रकार यहाँ ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं,

जी कैसें मियां जाणावें।काय जाणोनि सदा चिंतावें। जरी तूंचि म्हणों आघवें। तरि चिंतनचि न घडे।।

आपके चिन्तन के लिए मुझे कुछ आकार चाहिए, चिन्तन के लिए मुझे कुछ स्थान चाहिए। निराकार का चिन्तन सम्भव नही है इसलिये मैं कैसे आपको सम्पूर्णत: जानू? मैं चिन्तन कैसे करूँ? जिससे मुझे आपकी अनुभूति हो जाए, आपका ज्ञान हो जाए और आपका वह अलौकिक प्रकाश मेरे अन्तःकरण को प्रकाशित कर दें।

सत्रहवें श्लोक मे हमने देखा कि अर्जुन कहते हैं, ये योगी लोग आपका चिन्तन कैसे करते हैं? मैं आपका विभूतियोग आप ही की अमृतवाणी से सुनना चाहता हूँ।

10.18

विस्तरेणात्मनो योगं(म्), विभूतिं(ञ्) च जनार्दन।
भूयः(ख्) कथय तृप्तिर्हि, शृण्वतो नास्ति मेऽमृतम्॥10.18॥

हे जनार्दन ! (आप) अपने योग (सामर्थ्य) को और विभूतियों को विस्तार से फिर कहिये; क्योंकि (आपके) अमृतमय वचन सुनते-सुनते मेरी तृप्ति नहीं हो रही है।

विवेचन- हे जनार्दन! यह जो आपकी योगशक्ति और विभूतियाँ हैं, इनका आप मुझे विस्तृत वर्णन कर के बताएँ। आपका विभूतियोग आप ही की अमृतमय वाणी से सुनना चाहता हूँ क्योंकि आपकी अमृतमय वाणी इस समराङ्गण में सुन रहा हूँ, पर मेरे कान और मेरा मन तृप्त ही नहीं हो रहे हैं।

सन्त ज्ञानेश्वर माऊली कहते हैं, क्या गङ्गाजल कभी बासी हो सकता है? कितना भी पुराना होने पर भी क्या उसमें कभी जन्तु हो सकते हैं? क्या सूर्य का प्रकाश कभी बासी हो सकता है? क्या हम कभी गङ्गाजल जैसे पवित्र जल को और सूर्य प्रकाश को मना कर सकते हैं? नहीं, वे तो हमें नित्य चाहिए। ठीक उसी प्रकार आपके अमृतमय वचनों से मेरी तृप्ति ही नहीं हो रही है। ऐसी उत्कण्ठा है कि आपकी अमृतवाणी बरसती रहे और मैं सुनता रहूँ।

अर्जुन की बातें सुनकर श्रीभगवान् प्रसन्नता से मुस्कुराते हैं और सोचते हैं कि अर्जुन मुझसे कितना प्रेम करते हैं कि इस युद्धप्रसङ्ग के समय भी मेरी विभूतियों के बारे में जानना चाहते हैं।

तुकाराम महाराज कहते हैं,

रात्रि दिवस आम्हां युद्धाचा प्रसंग। अंतर्बाह्य जन आणि मन।।

इस प्रकार हमारे विकारों के साथ भी हमारा प्रतिदिन सङ्घर्ष चलता रहता है। वैसे भी हमारा झगड़ा किसी न किसी के साथ होता रहता है, वह भी युद्ध के समान ही है।

जब कुरुक्षेत्र के युद्ध के समय अर्जुन की विभूतियोग सुनने की लालसा देखकर श्रीभगवान् उन पर प्रसन्न हुए तो हमारे नित्य जीवन सङ्घर्ष के समय यदि हम गीता जी का पठन, मनन करेंगे, विवेचन सुनेंगे तो क्या भगवान् श्रीकृष्ण हम पर प्रसन्न नहीं होंगे?

10.19

श्रीभगवानुवाच
हन्त ते कथयिष्यामि, दिव्या ह्यात्मविभूतयः।
प्राधान्यतः(ख्) कुरुश्रेष्ठ, नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे॥10.19॥

श्रीभगवान् बोले -- हाँ, ठीक है। मैं अपनी दिव्य विभूतियों को तेरे लिये प्रधानता से (संक्षेप से) कहूँगा; क्योंकि हे कुरुश्रेष्ठ ! मेरी विभूतियों के विस्तार का अन्त नहीं है।

विवेचनः श्रीभगवान् प्रसन्न हो कर कहते हैं- हे कुरुश्रेष्ठ! तुम मेरी योगशक्ति, सारी विभूतियों को विस्तारपूर्वक जानना चाहते हो परन्तु मेरे विस्तार का, मेरी विभूतियों का कोई अन्त नही हैं। मैंने अपनी कुछ विभूतियों का वर्णन प्रधानता से कर दिया तो तुम यह मत समझना कि मेरी विभूतियाँ इतनी ही हैं!

मेरी विभूतियाँ अनन्त हैं। सन्त ज्ञानेश्वर महाराज ने इसका वर्णन करते हुए कहा है कि हमारे शरीर पर जितने बाल हैं उतनी श्रीभगवान् की विभूतीयाँ हैं। जिस प्रकार अपने शरीर के बाल हम गिन नही सकते उसी तरह श्रीभगवान् की विभूतियाँ गिनना असम्भव है ये विभूतियाँ अनगिनित, अनन्त हैं।

श्रीभगवान् कहते है मेरी विभूतियाँ इतनी है कि उन सभी का वर्णन करना मेरे लिये भी सम्भव नही है, इसलिये जो प्रधान विभूतियाँ हैं मैं केवल उनका ही उल्लेख कर रहा हूँ।

इस प्रकार अर्जुन ने पूछा कि मैं किसका चिन्तन करूँ तो वह परमात्मा का चिन्तन होगा?

भगवद्गीता भी श्रीभगवान् कि एक विभूति ही है, इसलिये हमें गीताजी का चिन्तन-मनन करना चाहिए।

जयतु जयतु गीता, वाङ्मयी कृष्णमूर्तिः।
ज्ञानेश्वर महाराज गीता जी का जय जयकार करते हुए कहते है कि यह भगवद्गीता भगवान् श्रीकृष्ण की वाङ्मय मूर्ति ही है।

यह भगवान् श्रीकृष्ण की साहित्य रुपी मूर्ती है, यह मन्त्र हैं। मन्त्र ता अर्थ है आमन्त्रण देना। गीता जी के मन्त्र गा कर हम भगवान् श्रीकृष्ण को बुला सकते हैं। भगवद्गीता एक विभूति है जिसका चिन्तन कर के हम भगवान् श्रीकृष्ण से जुड़ सकते हैं।

आगे अर्जुन श्रीभगवान् से पूछते हैं कि सांसारिक पदार्थ मे जो आपका विशेष प्रकाश है, उसे परावर्तित करने वाला विशेष स्थान, विभूति या व्यक्ति का वर्णन कर दीजिए जिसे मैं समझ सकूँ, तो श्रीभगवान् कहते हैं, उसका वर्णन करना तो मेरे लिए भी सम्भव नही है। इसका विस्तार मैं नही कर सकता परन्तु मैं तुम्हे कुछ सङ्क्षेप मे बताऊँगा कि ये विभूतियाँ क्या हैं? पर एक चेतावनी श्रीभगवान् अर्जुन को देते हुए अर्जुन को सजग कर देते हैं कि केवल यही विभूतियाँ हैं यह समझ कर उनके साथ जुडो़गे और प्रत्येक के अन्तःकरण मे परमात्मा स्थित हैं यह भूल जाओगे, तो यह जान लो कि यही मेरी पहली विभूति है।

10.20

अहमात्मा गुडाकेश, सर्वभूताशयस्थितः।
अहमादिश्च मध्यं(ञ्) च, भूतानामन्त एव च॥10.20॥

हे नींद को जीतने वाले अर्जुन ! सम्पूर्ण प्राणियों के आदि, मध्य तथा अन्त में मैं ही हूँ और सम्पूर्ण प्राणियों के अन्तःकरण (हृदय) में स्थित आत्मा भी मैं हूँ।

विवेचनः अर्जुन को श्रीभगवान् यहाँ गुडाकेश नाम से सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि (गुडाकेश अर्थात् जिसने अपनी निद्रा पर नियन्त्रण पा लिया है।) अर्जुन ने धनुर्विद्या सीखने के लिए रात-रात भर अपनी निद्रा को त्याग कर अभ्यास किया था। अर्जुन का अपनी निद्रा पर पूरा नियन्त्रण था, परन्तु अभी अर्जुन मोहरूपी निद्रा में हैं इसलिये भी श्रीभगवान् अर्जुन को गुडाकेश कह रहे होंगे।

श्रीभगवान् कहते हैं- हे गुडाकेश! भूतमात्र के आशय यानी अन्तःकरण में स्थित, मैं कौन हूँ? आत्मा एवम् आत्मरूप में, मैं सभी के हृदय मे स्थित हूँ। मैं सभी में विराजित आत्मतत्त्व हूँ, यह भुलना नही।

केवल बहिरङ्ग मे परमात्मा की विभूतियों को देखोगे और अन्तःरङ्ग के आत्मतत्त्व को भूल जाओगे, तो मैं समग्रता से तुम्हे प्राप्त नहीं होऊँगा, यह समझ लो।

पहली विभूति श्रीभगवान् ने जो बताई वह है, आत्मतत्त्व। अपना पता भी बता दिया कि मैं हृदय में स्थित हूँ। भगवद्गीता मे कई जगह श्रीभगवान् अपना पता बताते है। यहाँ पर बताते हैं कि सभी के अन्त:करण मे विराजित, स्थित वो आत्मत्तत्व मैं ही हूँ।

Internally we all are one and inter connected.

हम सभी आन्तरिक रूप मे एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं।

सातवें अध्याय मे हमने देखा है,

मत्तः(फ्) परतरं(न्) नान्यत्, किञ्चिदस्ति धनञ्जय।

मयि सर्वमिदं(म्) प्रोतं(म्), सूत्रे मणिगणा इव॥7.7॥

जिस प्रकार से माला में मणि पिरोए जाते हैं उसी प्रकार मैने सभी भूतमात्र को अदृश्य अन्तःकरण रूपी सूत्र में पिरोया है। सभी भूतमात्र का, सृष्टि का आदि, मध्य और अन्त सभी मैं हूँ।

बहुत महत्त्वपूर्ण बात है कि हमारे सन्त-महात्मा परमात्मा को सृष्टि के कण-कण मे कैसे देखते थे?

सन्त सावता माळी अपने खेत मे उगी हर सब्जी-भाजी, प्याज- मूली मे विट्ठल भगवान् को देखते थे,

कांदा, मुळा, भाजी, अधि विठाई माझी।

रामकृष्ण परमहंस जी के जीवन का एक प्रसङ्ग है। उन्हें मिठाई अतिप्रिय थी परन्तु गले के केंसर के कारण वे मिठाई नही खा सकते थे। वास्तव में श्री रामकृष्ण जी ने मिठाई के बहाने दुनिया से तारतम्य जोड़ के रखा था। तब उनके प्रिय शिष्य नरेन्द्र दत्त अर्थात् स्वामी विवेकानन्द जी ने उनसे प्रार्थना की, कि वे जगदम्बा काली माई को उनका रोग ठीक करने की प्रार्थना करें जिससे वे मिठाई खा सकें तब श्रीरामकृष्ण जी ने सुन्दर उत्तर दिया कि अरे! आप सब लोग जो अपने-अपने मुखों से मिठाई खा रहे हैं, वह मैं ही तो खा रहा हूँ। देखिए कि सन्त-महात्मा, सब लोगों के साथ किस प्रकार से एकाकार होते थे।

श्री ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं-

तैसा हृदयामध्ये मी रामू। असता सर्व सुखाचा आरामू।

का भ्रांतासी पडे कामू। विषय वरी।।

सन्त कबीर कहते हैं अरे, भगवान् को कहाँ ढूँढ रहे हो?

मोको कहाँ ढूँढे रे बन्दे, मैं तो तेरे पास में।

न मन्दिर में न मस्जिद में, न काबा कैलास में।।

मैं तो तुम्हारे ही अन्दर स्थित हूँ। तीर्थ स्थानों से उर्जा प्राप्त करने जाएँ पर ये न भूलें कि परमात्मा तो अन्तःकरण मे विराजित हैं।

इसलिये श्री ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं-

तैसे हृदया मधे मी रामू, रमू याने विश्राम, रम जाना।

राम शांतता, निर्वाण हैं।

शान्ति के लिए, सुख के लिए दौड़ने वाले जीव को श्री ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं, अरे, तुम्हारे हृदय मे स्थित उस राम का, आत्मत्तत्व का परिचय कर लो न।

परम् श्रद्धेय श्रीगुरुदेव जी कहते हैं कि हमारी सनातन् संस्कृति में एक सुन्दर पद्धति है कि हम जब एक दुसरे से मिलते हैं तो राम-राम कहते हैं। इसका मतलब यह है कि तुम्हारे अन्दर के राम और मेरे अन्दर के राम का मिलन हो।

अहम् ब्रह्मास्मि तत्वमसि।

जब शिष्य उस अनुभूति तक पहुँचते हैं तो गुरु, शिष्य को कहते हैं, तत्वमसि, तुम वही हो। तो शिष्य उत्तर देता है, अहम् ब्रह्मास्मि, मैं ही वह ब्रह्मस्वरूप हूँ।

यह भी ध्यान रखने योग्य है कि हम यहाँ ब्रह्मविद्या सीख रहे हैं। हम यह ब्रह्मविद्या उसके साथ एकाकार होकर, जुड़ कर सीख रहे हैं। जैसा कि हम पुष्पिका मे देखते है,।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासु उपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां(युँ),

परन्तु हमें एक बात ध्यान में रखनी है कि भले ही हम सब एक-दूसरे से जुड़े हैं परन्तु सबके साथ एक जैसा व्यहवार नहीं करना है। जिस प्रकार एक ही विद्युत से अलग अलग उपकरण चलते हैं और उनके उपयोग अलग-अलग होते हैं उसी तरह चेतना एक होने पर भी हमें सब व्यक्तियों से अलग-अलग व्यवहार उनकी योग्यतानुसार करना चाहिए।

जिस प्रकार अध्याय पाँच मे कहा है-

विद्याविनयसम्पन्ने, ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।

शुनि चैव श्वपाके च, पण्डिताः(स्) समदर्शिनः॥5.18॥

अर्थात्, विद्या सम्पन्न ब्राह्मण हो, गौ माता हो, हथिनी हो, कुत्ता हो, माँस भक्षी चाण्डल हो, सभी मे वही चेतना है परन्तु सम् वर्तना नही है। हमें सबकी चेतना का दर्शन करना चाहिए, परन्तु सबके साथ व्यवहार उनकी योग्यता के अनुसार ही करना चाहिए।

इसलिये कहते हैं-

पायरीशी होउ दंग, गावूनी अभंग।

स्वयं को पहचानना, अपनी भी पात्रता समझना आवश्यक है। मेरे अन्दर भी वही परमात्मा हैं परन्तु उन्होंने मुझे कहाँ रखा है? यह समझना भी आवश्यक है।

भगवान् श्रीराम जो मर्यादा पुरुषोत्तम होकर भी कभी भी अपनी सीमाओं का उलङ्घन नही करते। भगवान् श्रीराम की तरह ज्ञान प्राप्त करते हुए हमें समग्रता से जीवन यापन करना चाहिए।

आगे श्रीभगवान् विभूतियों का विस्तार कर रहे हैं।

10.21

आदित्यानामहं(म्) विष्णुः(र्), ज्योतिषां(म्) रविरंशुमान्।
मरीचिर्मरुतामस्मि, नक्षत्राणामहं(म्) शशी॥10.21॥

मैं अदिति के पुत्रों में विष्णु (वामन) (और) प्रकाशमान वस्तुओं में किरणों वाला सूर्य हूँ। मैं मरुतों का तेज (और) नक्षत्रों का अधिपति चन्द्रमा हूँ।

विवेचन- जिस प्रकार की विभूतियाँ होती हैं उनका वर्णन श्रीभगवान् आगे करते हैं-

ज्ञानेश्वरी में भी सन्त ज्ञानेश्वर महाराज सबसे पहले कहते हैं-

ॐ नमोजी आद्या । वेदप्रतिपाद्या। जय जय स्वसंवेद्या । आत्मरूपा॥1।।
वेद ने प्रतिपादित किया हुआ जो आद्य, आत्मतत्व है उस आत्मतत्त्व को प्रणाम करते हुए सन्त ज्ञानेश्वर महाराज अपने मुखारविन्द से ज्ञानेश्वरी प्रस्फुटित करते हैं।

उसी प्रकार श्रीभगवान् भी पहले यहाँ आत्म रूप की पहचान करने के लिए कहते हैं। जो बारह आदित्य हैं उसमें सबसे प्रखर किरणों वाला, कार्तिकमासी अंशुमान है, वह मैं हूँ।

श्रीभगवान् की सृष्टि का सञ्चालन करने वाले अनेक देवता बताये हैं, जैसे मरुत, कुल उनचास(49) मरुत हैं जो वायु देवता को यहाँ से वहाँ लेकर जाते हैं, जिसे हम हवा का बहना कहते हैं। उन मरुत गणों मे मरीचि नामक मरुत (तेज) मैं हूँ।

सारे सत्ताईस नक्षत्रों में, शशि अर्थात् चन्द्रमा, मैं हूँ। चन्द्रमा का प्रभाव मन पर बहुत होता है।

श्रीभगवान् आगे कहते हैं- वेदों में सामवेद मैं हूँ क्योंकि यह सङ्गीत प्रधान है। सङ्गीतमय संवेग तीव्र होता है। जब हम श्रीभगवान् के श्लोक या स्तोत्र सङ्गीतमय गाते हैं तो उसका प्रभाव तीव्र होता है।

जो देव हैं उनमे इन्द्र मैं हूँ।

मन कहाँ होता है, ये जाने। गुरुदेव एक सुन्दर कथा सुनाते हैं।

पुराने जमाने में दो मित्र जगन्नाथ पुरी में श्रीजगन्नाथ जी के दर्शन करने के लिए जाते हैं। रास्ते मे नृत्य का कार्यक्रम चल रहा था, तमाशा चल रहा था तो एक मित्र वहाँ रुक गया और बोला मैं थोड़ा रुक कर आता हूँ, तुम आगे जाओ। जगन्नाथ जी तो कही

जाने वाले हैं नही। तुम पहुँचो, मैं आता हूँ। दूसरा मित्र जगन्नाथ जी के मन्दिर मे पहुँचा और जगन्नाथ जी के सामने खड़ा हो गयाा, तो भी उसके मन मे आया कि मेरा मित्र तो अच्छा नृत्य देख रहा है। उसी प्रकार जो मित्र नृत्य देख रहा था, नृत्य देखते-देखते उसके मन मे आया कि वहाँ मेरा मित्र तो जगन्नाथ जी के दर्शन कर रहा है। जो जगन्नाथ जी के सामने खड़ा था उसका मन नृत्य में था और जो नृत्य में था उसका मन जगन्नाथ जी के यहाँ था। इस तरह से हमारा मन जहाँ होता है हम वहीं होते हैं।

10.22

वेदानां(म्) सामवेदोऽस्मि, देवानामस्मि वासवः।
इन्द्रियाणां(म्) मनश्चास्मि, भूतानामस्मि चेतना॥10.22॥

(मैं) वेदों में सामवेद हूँ, देवताओं में इन्द्र हूँ, इन्द्रियों में मन हूँ और प्राणियों की चेतना हूँ।

विवेचन- श्रीभगवान् कहते हैं, वेदों मे सामवेद मैं हूँ।
देवताओं में इन्द्र मैं हूँ।
हे अर्जुन! पञ्चेन्द्रियाँ (Sensory Organs) मैं हूँ। पाँच कर्मेन्द्रियाँ हैं, दो हाथ, दो पैर, गुद्स्थ, उपस्थ, वाणी। ये सभी दस इन्द्रियाँ और ग्यारहवाँ मन, इस प्रकार पाँच ज्ञानेन्द्रियों और पाँच कर्मेन्द्रियों में यह मन, मैं ही हूँ। वाणी ज्ञानेन्द्रिय व कर्मेन्द्रिय दोनों है।

यह मन की व्यवस्था बहुत आवश्यक होती है। गीता जी एक मनोवैज्ञानिक ग्रन्थ है। रणभूमि मे अर्जुन हतोत्साहित हो गए थे और उनका मनोबल बढ़ाने के लिए श्रीभगवान् ने भगवद्गीता कही।

मन के हारे हार है, मन के जीते जीत।

मन ही मनुष्य को मोह बन्धन में डालता है और मन ही मनुष्य को मुक्ति और मोक्ष की ओर लेकर जाता है।

मन जितना देह के साथ जुड़ेगा, वह उतना हो जड़ होता जाएगा और वैसे ही, मन जितना उस चैतन्य तत्त्व के साथ जुड़ेगा वह उतना ही चैतन्यमय होता जाएगा, इसलिये श्रीभगवान् कहते हैं कि मन को समझो क्योंकि मैं ही मन हूँ। जहाँ मन होता है, हम वहाँ होते हैं इसलिये मन की बड़ी महती है।

10.23

रुद्राणां(म्) शङ्करश्चास्मि,वित्तेशो यक्षरक्षसाम्।
वसूनां(म्) पावकश्चास्मि, मेरुः(श्) शिखरिणामहम्॥10.23॥

रुद्रों में शंकर और यक्ष-राक्षसों में कुबेर मैं हूँ। वसुओं में पवित्र करने वाली अग्नि और शिखरवाले पर्वतों में सुमेरु मैं हूँ।

विवेचन- श्रीभगवान् कहते हैं, एकादश, ग्यारह रुद्र हैं (इसलिये ग्यारह बार रुद्र पाठ किया जाता है।) इन रुद्रों मे भगवान् शङ्कर मेरी विभूति हैं। वैसे ही सब यक्ष, गन्धर्व, किन्नर (जो कलाओं से परिपूर्ण होते हैं) और राक्षसों मे धन के स्वामी कुबेर भी मेरी विभूति हैं।

आठ वसु मे जो द्यो नामक वसु थे उन्होंने षडयन्त्र करके महर्षि वशिष्ठ की कामधेनु गाय का अपहरण कर लिया था तो वशिष्ठ मुनि के श्राप के परिणामस्वरूप उन आठों वसुओं ने गङ्गा मैया के पुत्र बन कर जन्म लिया। उनमें से सात को तो गङ्गा मैया ने अपने प्रवाह मे बहा दिया पर ये जो द्यो था वो बच गया, जो आगे चल के भीष्म पितामह के नाम से जाने गये। इस तरह भीष्म गङ्गा जी के पुत्र थे। ऐसे वसुओं की अशुद्धियों को भस्म कर के पवित्र करनेवाली अग्नि मैं हूँ।

पर्वतों मे जो मेरु पर्वत हैं, वह मैं हूँ। उत्तराखण्ड में स्थित मेरु पर्वत सारे भूगोल का केन्द्र है, ऐसा कहा जाता है।

हमारे भारतवर्ष मे Geography को भूगोल कहा जाता है। हमारे ऋषि, मुनियों को तब से मालूम था कि हमारी धरा गोल है। बाद में गैलीलियो ने पृथ्वी गोल है यह सिद्धान्त दिया। नहीं तो ईसाई धर्म में यहीं मान्यता थी कि पृथ्वी चपटी है। गैलीलियो को पृथ्वी गोल है यह बोलने पर, चर्च के विरुद्ध जाने पर, बहुत प्रताड़ित कर के मार डाला गया था।

हमारा सनातन धर्म प्रारम्भ से ही ज्ञानवर्धक, विज्ञान से परिपूर्ण, विस्तृत और विचारशील था।

इस प्रकार बारह आदित्य, ग्यारह रुद्र, आठ वसु और दो अश्विनी कुमार, इस तरह कुल तैंतीस (33), जैसा हम कहते हैं कि हमारे तैंतीस कोटि देवी-देवता हैं और कोटि अर्थात् प्रकार, करोड़ नहीं। हमारे सनातन धर्म में तैंतीस कोटि देवी-देवता हैं।

10.24

पुरोधसां(ञ्) च मुख्यं(म्) मां(म्), विद्धि पार्थ बृहस्पतिम्।
सेनानीनामहं(म्) स्कन्दः(स्),सरसामस्मि सागरः॥10.24॥

हे पार्थ ! पुरोहितों में मुख्य बृहस्पति को मेरा स्वरूप समझो। सेनापतियों में कार्तिकेय और जलाशयों में समुद्र मैं हूँ।

विवेचन- श्रीभगवान् कहते हैं, ब्राह्मणों मे जो देवताओं के पुरोहित, बृहस्पति हैं वो मैं ही हूँ। जो देवताओं के अग्रगण्य सेनापति स्कन्द यानि भगवान् शङ्कर के पुत्र और भगवान् गणेश के भ्राता, कार्तिक स्वामी हैं वो मैं हूँ। सब जलाशयों में समुद्र मैं हूँ।

10.25

महर्षीणां(म्) भृगुरहं(ङ्),गिरामस्म्येकमक्षरम्।
यज्ञानां(ञ्) जपयज्ञोऽस्मि, स्थावराणां(म्) हिमालयः॥10.25॥

महर्षियों में भृगु और वाणियों (शब्दों) में एक अक्षर अर्थात् प्रणव मैं हूँ। सम्पूर्ण यज्ञों में जप यज्ञ (और) स्थिर रहने वालों में हिमालय मैं हूँ।

विवेचन- श्रीभगवान् कहते हैं- महर्षियों मे भृगुसंहिता रचयिता, भृगु ऋषि मैं हूँ। भृगु ऋषि ने ज्योतिष शास्त्र का निर्माण किया। उन्होंने भविष्य मे जन्म लेने वाले सब ऋषि, मुनियों की भविष्यवाणी कर के रखी थी।

अक्षरों मे एक अक्षर (प्रणवाक्षर), ॐ (ओङ्कार) मैं हूँ। स्थिर रहने वालों मे हिमालय पर्वत मैं हूँ। हिमालय के कण-कण में आध्यात्मिकता है।

चतुर्थ अध्याय मे श्रीभगवान् ने विभिन्न यज्ञों का वर्णन किया है। जैसे द्रव्य यज्ञ, तप यज्ञ, योग यज्ञ आदि, पर श्रीभगवान् कहते हैं, सर्व यज्ञों में, मैं जप यज्ञ हूँ। जप यज्ञ अर्थात् श्रीभगवान् का नाम स्मरण उन्हीं के लिए करना और उन्हीं को अर्पण करना। जप करने के कोई नियम-आसान- प्राणायाम नही हैं। केवल और केवल जप करेंगे तो भी हमारा उद्धार होगा ऐसा श्री गुलाबराव महाराज कहते हैं।

परमपूज्य श्री गोन्दवलेकर महाराज जप को अति महत्त्वपूर्ण बताते हैं। उन्होंने अपने सारे शिष्यों को श्रीराम जयराम, जय जय राम यही मन्त्र दिया था। उन्होंने तो गङ्गा जी के पात्र में खड़े होकर, सौगन्ध लेकर कहा है कि जो भी मुझे ज्ञान मिला, मैने जो भी विद्या पाई है वह केवल राम नाम के जप से ही मिला है।

जप का इतना महत्त्व है इसलिये श्रीभगवान् कहते हैं, जप यज्ञ मैं हूँ।
श्रीभगवान् कहते हैं, ॐ, ओङ्कार मेरा एकाक्षरी नाम है।

अ अर्थात् जागृति, ऊ अर्थात् सुसुप्ति, म अर्थात् स्वप्न और चन्द्रबिन्दु अर्थात् तुर्यावस्था। यह ओङ्कार परमात्मा का एकाक्षरी स्वरूप है। महर्षि पतञ्जलि कहते हैं, तस्य वाचक: प्रणव:, प्रणव अर्थात् ओङ्कार और उसे बुलाना है, मन मे जाग्रत करना है तो उसे ॐ शब्द से बुलाना चाहिए।

अर्जुन श्रीभगवान् से अनुनय करते हैं कि एक बार फिर से आपकी योगशक्ति और सभी विभूतियों के बारे मे कृपया बतायें।

इस प्रकार से श्रीभगवान् एक-एक विभूति बताते हैं और अन्ततोगत्वा श्रीभगवान् जो ज्ञान की बाते बताते हैं, जिसके कारण अर्जुन को विश्वरूप देखने की प्रबल इच्छा मन में जाग्रत हो गई वह हम उत्तरार्ध के विवेचन मे देखेंगे।

इसी के साथ सत्र समाप्त हुआ एवं प्रश्नोत्तर सत्र आरम्भ हुआ।

विचार - मन्थन (प्रश्नोत्तर)-

प्रश्नकर्ता - विद्याधर जी
प्रश्न - श्लोक क्रमाङ्क बाईस (22) में भूतानामस्मि चेतना समझ में नहीं आया, फिर से समझा दीजिए?
उत्तर - श्रीभगवान् ने आरम्भ में ही बताया था कि विभूतियों के विस्तार का अन्त नहीं हैं। केवल प्रधानता से बता रहें हैं। वे बता रहें हैं कि भूत प्राणियों की चेतना अर्थात् जीवनशक्ति मैं हूँ।

प्रश्नकर्ता - KRM राव जी
प्रश्न - श्लोक क्रमाङ्क इक्कीस (21) में तो उनचास (49) मरुत के तेज को विभूति बताया गया पर विवेचन में मुझे पचास (50) सुनने में आया कृपया स्पष्ट कीजिए?
उत्तर - विवेचन में भी उनचास (49) मरुत के तेज को ही विभूति बताया गया है। सम्भवतः सुनने में कुछ छूट गया है।

।। ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु।।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!

Let’s come together with the motto of Geeta Pariwar, and gift our Geeta Classes to all our Family, friends & acquaintances

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||